PUNE RESEARCH SCHOLAR ISSN 2455-314X
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY JOURNAL VOL 8, ISSUE 2

# बदलते मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में उच्च शिक्षा का महत्व

**डॉ. छाया आर. सुचक**
**समाजशास्त्र विभाग**
**विजयनगर आर्ट्स कॉलेज विजयनगर**
**गुजरात भारत**

जीवन प्रति क्षण परिवर्तनशील है । जो इस क्षण है वह अगले क्षण नहीं है और जो पिछला क्षण, था, वह दोबारा उपलब्ध नहीं हो सकता । इस परिव्रतनशील समाज में मूल्य स्थिर हो हीन नहीं सकते । मानवीय मूल्य समाज-सापेक्ष्य, निरन्तर प्रवाहमान होते हैं । इस परिवर्तन और प्रवाह की अपनी एक निश्चित गति और सीमा है, जो क्रमशः घटित होती रहती है । दो-दो विश्वयुद्धों की विभीषिका और परमाणु बम से हिरोशिमा तथा नागासाकी में हुए नरसंहार ने सम्पूर्ण मनुष्यता को स्तब्ध कर दिया । "वसुधेव कुटुम्बकम्" जैसे मूल्य की अगाधता, आस्था, धर्म आदि सभी पर से मनुष्य का विश्वास डिग गया । अब तक की अवधाराणा यह थी कि जब भी धर्म का पराभव होगा तब वह ईश्वर दुष्टों के विनाश के लिए और साधुओं की रक्षा के लिए अवतार लेगा, सभी धर्म किसी-न-किसी रूप में इस बात को स्वीकार करते हैं । परन्तु, एटम बम की विभीषिका यह प्रश्न उठाया कि जब मनुष्य का विनाश हो रहा था तो यदि ईश्वर था, तो आया क्यों नहीं ? आस्था के दर्शन का यह महत्वपूर्ण प्रस्थान बिन्दु है । नीत्शे जैसे दार्शनिक ने कहा कि ईश्वर मर गया है, क्योंकि अगर वह रहा होता तो इतने बड़े नरसंहार के समय अवश्य आता । उसने युद्ध को अवश्य रोका होता । परन्तु वह नहीं आया, इससे यह सिद्ध होता है कि या तो ईश्वर था ही नहीं या रहा होगा तो अब वह मर चुका है ।

डॉ. धर्मवीर भारती ने अपने काव्य नाटक 'अन्धायुग' में इसी प्रश्न को उठाते हुए कहा है कि प्रभु की मृत्यु के बाद मनुष्य का भविष्य कौन वहन करेगा ? अब तक तो वह (ईश्वर) सबका योग-क्षेम वहन करता था । अब मनुष्य का भविष्य कौन वहन करेगा ? यही प्रश्न प्रकारान्तर से फ्रेंच नाटककार सैमुअल वैकेट ने अपने नाटक "वेटिंग फॉर गोडो" में उठाया है कि अभिशप्त मानवता प्रतीक्षा करती है कि वह (गोडो-ईश्वर) एक दिन अवश्य आएगा और हमें सभी दुखों से छुटकारा दिलाएगा । पर प्रत्येक के अन्त में उसका एक दूत आता है और कहता है कि वह ज नहीं आएँगे । शायद कल आएँगे । पूरी मानवता फिर से प्रतीक्षा में संलग्न हो जाती है और वह कभी नहीं आता । 'वेटिंग फॉर गोडो' की यह त्रासदी, ईश्वर के अस्तित्व पर प्रश्नचिहन लगने पर सारी मानवता की त्रासदी बन जाती है ।

भारत बहुजातीय, बहुधर्मीय, बहुप्रकृति वाले समाज से युक्त देश है । वह एक साथ बहुत सारी शताब्दियों में भी वास करता है । एक साथ दसवीं शताब्दी के मूल्यों को धारण करता है । पन्द्रहवीं, सोलहवीं शताब्दी का मध्यकाल अबब भी उसके लिए जीवित है । इक्कीसवीं और पच्चीसवीं शताब्दी की अति आधुनिकता भी उसके व्यवहार में दिखाई पड़ती है । वह एक ओर तो सामन्तीय युग में रहता है, दूसरी ओर उत्तर औद्योगिक, उत्तर-आधुनिकता वाले मूल्यों के साथ रहने की चेष्टा करता है । यह तथ्य भारतीय समाज में विविध वर्गों के साथ ही नहीं बल्कि व्यक्ति के साथ सिद्ध होता है । एक ही व्यक्ति अपने एक ही जीवन में पृथक्-पृथक् स्थानों में पृथक्-पृथक् शताब्दियों के मूल्यों के साथ रहता है । भारतीय समाज की जटिल मूल्य दृष्टि उसके समस्त आचार-व्यवहार को प्रभावित करती रहती है ।'

जटिल मूल्यबोध वाले समाज की शिक्षा व्यवस्था बहुआयामी, बहुमूल्य बोध वाली होने की सम्भावना है । परन्तु वास्तविकता यह है कि पिछले अनेक वर्षो में हमने शिक्षा को समाज और मूल्य चेतना से भिन्न स्थापित करने का प्रयास किया है । परिणाम यह हुआ कि उच्च शिक्षा केवल विषय की सूचना देने मात्र का कार्य करने लगी । मानवीय जीवन और उसके द्रष्टिकोण में

परिवर्तन लाना उसके लिए महत्वपूर्ण नहीं रहा । विधार्थी जब शिक्षण संस्थाओं से विषय की सूचनाएँ और जानकारियाँ लेकर निकलता है, तब वह इस जटिल समाज में स्वयं को मिसफिट पाता है । भारतीय समाज में शिक्षा अजनबीपन एक बड़ी और गहन चिन्ता का विषय है । उच्च शिक्षा को लेकर यह भी एक महत्वपूर्ण प्रश्न है कि वह समाज के किस वर्ग का हित पोषण करने के लिए बनी है ? शिक्षा की कोई पक्षधरता भी है या वह मात्र निरपेक्ष विषय सूचना है ।

बहुलतावादी जटिल समाज के साथ विधार्थी, शिक्षक और शिक्षण संस्थाएँ भी उच्च शिक्षा के अनिवार्य घटक के रूप में है । आज इस सभी के पारस्परिक सम्बन्धों की पड़ताल आवश्यक है । उच्च शिक्षा में अधुनातन प्रवृत्ति यह है कि बिना शिक्षकों के भी विधालय सेन्टर औफ एक्सीलेंसी बन सकता है । अतः यहाँ पर प्रति व्याख्यान पर अनुबन्धित अध्यापक आता है । उसका विधालय और विधार्थी से कोई भावनात्मक रिश्ता नहीं बन पाता । सरकार यह मानती है कि इस अनुबन्धित अध्यापक को पाँच हजार रुपए से अधिक नहीं मिलना चाहिए, जबकि उसी कार्य के लिए उतनी ही शैक्षिक अर्हता रखने वाला अध्यापक पच्चीस से तीस हजार रुपए प्रतिमाह प्राप्त करता है । ऐसे दुर्निवार समय में असन्तुष्ट अध्यापक अपनी आजीविका के लिए संघर्ष ही करता रहेगा तो यह विद्यार्थियो को विषय की सूचना भी सम्यक् रूप से दे पाने में सक्षम नहींह गा । ऐसी व्यवस्था से निकलने वाला विद्यार्थी न तो विद्यालय से भावनात्मक रूप से जुड़ा होता है, न अध्यापक से और न समाज से । समाज में ऐसे व्यक्तियों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है जो साक्षर है, विषय की सूचनाओं से लैस है, किन्तु अशिक्षित हैं । वे स्वार्थ और आत्मकेन्द्रण का शिकार भी रहते हैं । सामाजिक सरोकारों से उनका कोई सम्बन्ध नहीं होता । वह समाज निश्चित रूप से अपराधियों और माफियाओं के चंगुल में चला जाता है । समाज के अपराधीकरण का यह एक मुख्य कारण है कि उसे चुनौती देने वाला समाज कहीं अस्तित्व में नहीं है ।

उच्च शिक्षा की प्रविधि (टेकनीक) में मानवीय उपस्थिति एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है । अध्यापक और विद्यार्थी का साथ-साथ कक्षा में होना उनके बीच एक सम्बन्ध स्थापित करता है । जबकि नवीनतम प्रविधियों में संगणक (कम्प्यूटर) के आगमन से, मीडिया द्वारा दूरस्थ शिक्षा

के अभियान से मनुष्य का स्थान यन्त्र लेता जा रहा है । यहाँ मानवीय सरोकारों के स्थान पर यान्त्रिकता महत्वपूर्ण होती जा रही है । इससे समाज निरपेक्ष, स्वार्थी मनुष्य की संरचना में प्रकारान्तर से सहायता मिल रही है ।

इस प्रकार जटिल मूल्य-संरचना वाले समाज में उच्च शिक्षा की परिकल्पना करते समय उपर्युक्त सभी चिन्ताओं को ध्यान में रखना होगा । अन्यथा एक खूँखार समाज का दुःस्वप्न हमारे समाज के द्वार पर दस्तक दे रहा है । हत्याएं, बलात्कार, दहेज तो वे कुछ लक्षण हैं जो उस हिंसक समाज के आगमन की सूचना दे रहे हैं । इनसे बचने का एक मात्र उपाय है कि शिक्षा को मात्र सूचनाओं के आदान-प्रदान का केन्द्र न बनने दिया जाए । उसे मानवीय सरोकारों और बदलते मूल्यों से जोड़ा जाए । नए नैतिक और आध्यात्मिक मूल्य तलाशे जाएँ । वह विवेक द्रष्टि स्वयं में विकसित की जाए, जो बदलते हुए समाज में मूल्यों का विकल्प प्रस्तुत कर सके ।

## सन्दर्भ –

1. डॉ. धर्मवीर भारती, अन्धायुग ।
2. सैमुअल वैकेट, वेटिंग फार गोडो ।
3. एडोल्फ हिटलर, मेन कैम्फ ।
4. डॉ. विजयेन्द्र स्नातक, विमर्श के क्षण ।
5. डॉ. नन्दकिशोर नवल, भारतीय मूल्य की चिन्ता का विकास ।
6. www.googal.com